प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण की विधियां एवं सीमाएं

* डॉ. के.के. शर्मा

21वीं सदी में सभी देशों में लोक प्रशासन का अविरल विस्तार हो रहा है । शासन के कार्यो में नित नयी वृद्धि एक अविरल प्रक्रिया का रूप धारण कर चुकी है । भारत में भी प्रशासन की शक्तियों का निरन्तर विकास हो रहा है। अतः द्वितीय महायुद्ध एवं उसके पश्चात उत्पन्न समस्याओं, देशी रियासतों के विलयन, नवीन संविधान लागू होने एवं उसके फलरूवरूप शासन द्वारा नवीन क्षेत्रों में अनेक कार्यो एवं पंचवर्षीय योजनाओं के आरंभ और देश की उत्तरी सीमाओं पर उत्पन्न नए संपर्को ने शासन की शक्तियों के प्रसार में योगदान दिया है , फलस्वरूप लोक प्रशासन अतुलित शक्तियों से युक्त है । ऐसी स्थिति में प्रशासन की इन शक्तियों को नियंत्रित करने की आवश्यकता स्वयंसिद्व है।1 यह कहावत सत्य है कि '' शक्ति भ्रष्ट बनाती है और अत्यधिक शक्ति अत्यधिक भ्रष्ट बना देती है । '' व्यक्ति शक्ति और सत्ता के मद में भ्रष्ट ना बने इसके लिए आवश्यक है कि उस पर समुचित अंकुश व नियंत्रण रखा जाए । जिनमें शक्ति का दुरूपयोग अनेक बार हुआ है । भारत में 26 जून 1975 से 23 मार्च 1977 तक लागू आपात काल में प्रशासन द्वारा की गई ज्यादतियां हमें सिखाती हैं कि प्रशासन पर प्रभावी नियन्त्रण के लिए कुशल प्रणाली का विकास किया जाना चाहिए अन्यथा प्रशासनिक शक्ति के दुरूपयोग को नहीं रोका जा सकता ।

शासन पर नियंत्रण की आवश्यकता इस कारण भी व्यक्त की जाती है कि प्रशासन के आकार के बढ़ने और प्रशासन के स्वयं के हित के पोषक के रूप में विकसित होने की प्रवृति भी होती है। प्रशासन का विकास समाज की आवश्यकता के लिए एक साधन के रूप में हुआ है। नियंत्रण और अंकुश के बिना प्रशासन अपने आपको साध्य बना लेता है और स्वहित में समाज का ही शोषण करने लगता है । 2

टैरी के अनुसार '' नियंत्रण का अर्थ है कार्यो को निश्चित करना , कार्यो का मूल्यांकन करना और यदि आवश्यक हो तो तरीकों में सुधार करना ताकि कार्य योजना के अनुसार हो सके । 3 नियंत्रण का उददेश्य यह निश्चित करना है कि सरकारी कर्मचारी अपने अधिकारों तथा विवेक का प्रयोग कानूनों , औपचारिक नियमों, विनियमों स्थापित कार्य पद्वतियों तथा परम्पराओं के अनुसार करते हैं । 4

व्हाइट के अनुसार '' प्रजातांत्रिक समाज में शक्ति पर नियंत्रण आवश्यक है शक्ति जितनी अधिक होती है , नियंत्रण की भी उतनी ही अधिक आवश्यकता होती है । स्पष्ट उद्देश्यों के लिए र्प्याप्त अधिकार कैसे समाहित किये जाएं और सत्ता को पंगु बनाने किए बिना कैसे समुचित नियंत्रण बनाए रखा जाए यह लोकप्रिय सरकार के सामने एक ऐतिहासिक उलझन है।5 इस प्रकार लोक प्रशासन पर नियंत्रण का प्रमुख उददेश्य लोक प्रशासन को जनता के प्रति संवेदनशील व उत्तरदायी बनाना है तथा इस बातको सुनिश्चित करना है कि प्रशासनिक कार्यो का संचालन संवैधानिक कानूनों , नीतियों, नियमों के अनुसार ही हो तथा वित्तीय संसाधनों के दुरूपयोग पर रोक लगे । मोटे तौर पर प्रशासनिक नियंत्रण दो प्रकार के होते हैं – आंतरिक नियंत्रण एवं बाह्य नियंत्रण आंतरिक नियंत्रण प्रशासन तंत्र के भीतर से कार्य करता है और यह इसी तंत्र का भाग होता है । जैसे – बजट व्यवस्था , कार्मिक प्रबंधन ,प्रशासनिक नेतृत्व ,वार्षिक गोपनीय रिकार्ड ,कार्य कुशलता सर्वेक्षण आदि। दूसरी ओर बाह्य नियंत्रण प्रशासन तंत्र के बाहर से काम करता है और इसका निर्धारण देश के संविधान द्वारा किया जाता है । प्रशासन पर बाह्य नियंत्रण निम्नलिखित एजेन्सियों द्वारा किया जाता है – 6 (1) विधायिका (2) कार्यपालिका (3) न्यायपालिका (4) नागरिक एवं सभ्य समाज (5) नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक इत्यादि यद्यपि प्रशासन पर नियंत्रण के इन समस्त तरीकों का अपना– अपना महत्व एवं प्रभाव है किन्तु प्रस्तुत लेख में प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण पर ध्यान केन्द्रित किया गया है । प्रशासन पर न्यायपालिका के नियंत्रण को न्यायिक नियंत्रण कहते हैं । प्रशासन पर न्यायपालिका का नियंत्रण उतना ही आवश्यक है ,जितना की प्रशासन पर विध ाायिका का नियंत्रण । न्यायालय जनता के अधिकारों तथा स्वतंत्रता के रक्षक हैं । जब भी सरकारी अधिकारी अनाचार करता है या अपने अधिकारों का दुरूपयोग करता है , कोई भी नागरिक न्यायालयो में उसके विरूद्व कार्यवाही कर सकता है और न्याय पा सकता है । 7 प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण का मुख्य उद्देश्य प्रशासनिक कार्यो की वैधानिकता को सुनिश्चित करके नागरिकों के अधिकारो एवं उनकी स्वतंत्रताओं की रक्षा करना है । एम0वी0 श्शर्मा के अनुसार न्यायालयों का काम नागरिकों की स्वतंत्रता एवं उनके अधिकारों की रक्षा करना है , अतः उसके दृष्टिकोण से न्यायालयों के द्वारा लागू नियंत्रण ' न्यायिक चिकित्सा ' कहलाते हैं । वास्तविकता यह है कि न्यायालयों के समक्ष सरकारी जवाबदेही और सरकारी ज्यादतियों या सत्ता के दुरूपयोग के विरूद्व नागरिकों के लिए न्यायिक चिकित्सा ये दोनों ही सिक्के के दो पहलू हैं । 8

प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण का विकास '' विधि का शासन '' नामक सिद्वांत पर आधारित है । ए0वी0 डायसी ने इस सिद्वांत को स्पष्ट करते हुए यह बताया है कि कोई व्यक्ति कानून के उपर नहीं है , चाहे उसका कोई भी पद हो । डायसी के अनुसार देश के प्रधान मंत्री से लेकर सबसे छोटे सरकारी पद पर कार्यरत कर्मचारी कानून के समक्ष समान है । प्रधान मंत्री हो चाहे लोक सेवक या फिर कोई सामान्य नागरिक , गैर कानूनी कार्य के लिए समान रूप से उत्तरदायी है । देश के समस्त नागरिकों , लोक सेवकों और राजनीतिज्ञों के लिए एक ही कानून है और सभी के लिए एक ही प्रकार की न्यायिक व्यवस्था । 9

प्रशासनिक कार्यो में न्यायपालिका निम्नलिखित स्थितियो में हस्तक्षेप कर सकती है ।

1) अधिकारों एवं सत्ता का दुरूपयोग – जब लोक सेवक अपने पद का प्रयोग किसी व्यक्तिगत कारण से दूसरे व्यक्ति को नुकसान पहुंचाने या किसी के प्रति बदले की भावना से करते हैं , तो प्रभावित व्यक्ति न्यायालय में श्शरण ले सकता है । 2) अधिकार क्षेत्र का अभाव – जब लोक सेवा के अधिकारी कोई ऐसा कार्य करते हैं , जो उनके अधिकार क्षेत्र के बाहर है। 3) वैधानिक त्रुटि – जब सरकारी अधिकारी कानून की गलत व्याख्या करें और नागरिकों को कानून का गलत ढंग से प्रयोग कर हानि पहुंचाऐं । ऐसी स्थिति में प्रभावित व्यक्ति न्यायालय में अपने अधिकारों की रक्षा के लिए अपील कर सकता है । 4) तथ्यों की प्राप्ति में त्रुटि – जब कोई सरकारी अधिकारी अपने किसी प्रशास–कीय कार्य में तथ्य को अच्छी तरह से पता लगाए बिना किसी नागरिक को उसे हानि पहुंचाने वाला कोई आदेश देता है। 5) जब अधिकारी या विभाग कानून द्वारा निर्धारित प्रकिया के अनुसार कार्य नहीं करते हैं और किसी व्यक्ति को सरकारी अधिकारी के ऐसे कार्य में हानि पहुंचती है तो वे न्यायालय की श्शरण ले सकते हैं । 10

न्यायिक नियंत्रण की पद्वतियां एवं उनकी सीमाएं – न्यायपालिका प्रशासन पर अनेक प्रकार से नियंत्रण स्थापित करती है । देश

*सहायक प्रोफेसर लोक प्रशासन विभाग राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

के संविधान , विधान मण्डल द्वारा पारित कानून और कॉमन लॉ द्वारा न्यायपालिका को प्रशासन पर नियंत्रण रखने की शक्तियां प्राप्त होती है ।

न्यायपालिका प्रशासन पर अंकुश रखती है और नागरिकों के हितों की रक्षा करती है । न्यायपालिका द्वारा लोक प्रशासन पर निम्नलिखित तरीकों से नियंत्रण रखा जाता है साधारण उपचार –प्रशासन पर न्यायपालिका नियंत्रण के साधारण उपचार निम्न प्रकार हैं –

II) प्रशासनिक कार्यो तथा निर्णयों का न्यायिक पुनर्निरीक्षण–समस्त प्रजातांत्रिक देशों में न्यायिक पुनर्निरीक्षण का प्रावधान है , ऐसे प्रशासनिक निर्णय जो स्वेच्छाचारिता पर आधारित है , जिनमें स्वविवेकीय शक्ति का दुरूपयोग किया गया हो , जो कानून और संविधान के प्रावधान के विरूद्व हों , अधिकारी के क्षेत्राधिकार के बाहर हों जिनके विधि द्वारा निध् ाारित कार्यविधि का पालन नहीं किया गया हो या गलत तथ्यों पर आधारित हों तो उन्हें अवैध घोषित करके निरस्त किया जा सकता है । इसी प्रकार अवैध तौर पर रोके गये किसी प्रशासकीय निर्णय को न्यायालय कियान्वित करने का आदेश दे सकती है । लाइसेंस देने , ठेके देने , न्याय निर्णय आदि के मामलों में प्रशास–निक अधिकारी गड़बड़ी करते हैं । इन मामलों में व्याप्त अनियमित्ताओं पर न्यायिक पुनर्निरीक्षण द्वारा अंकुश लगाया जाता है । भारत में संविधान के द्वारा न्यायिक पुनर्निरीक्षण को सीमित रखा गया है । संसद द्वारा पारित कुछ कानूनों से भी यह कुछ सीमित हो गया है । वैसे संसद एवं राज्य विधान मंडलों द्वारा पारित कानून भी न्यायिक पुनर्निरीक्षण में आते हैं। सामान्यतया स्वविवेक शक्ति के दुरूपयोग , कानून के उल्लंघन क्षेत्राधिकार के बाहर के मामले , निर्धारित प्रशासनिक प्रकिया को न अपनाने आदि मामलो में भारत में न्यायिक पुनर्निरीक्षण का प्रावधान है । 11

2) वैधानिक अपील – विशेष प्रकार के प्रशासनिक कार्य में ,पीडित नागरिक को न्यायालय में अपील करने का अधिकार होगा । इस स्थिति में वैधानिक अपील की जा सकती है। 12 प्रशासकीय निर्णय से प्रभावित व्यक्ति न्यायालयो के पास या उच्च प्रशासनिक न्यायाधि–करणों के पास अपील कर सकता है । इसका दूसरा विकल्प यह होता है कि प्रशासनिक संगठन से ही कहा जाए कि वह अपने आदेशों को लागू कराने के लिए न्यायालय की शरण ले। 3) सरकार के विरूद्व मुकदमें – सरकार के विरूद्व मुकदमें न्यायिक नियंत्रण का एक महत्वपूर्ण साधन है किन्तु सरकार के विरूद्व मुकदमें चलाने के विषय में कई प्रतिबन्ध देखने को मिलते हैं । जहां तक सरकार और नागरिकों के मध्य किसी अनुबंध का प्रश्न है ,सरकार अपनी साख, प्रतिष्ठा और विश्वास बनाए रखने की दृष्टि से ऐसे उत्तरदायित्वों से इन्कार नहीं करती लेकिन राज्य द्वारा किसी नागरिक या संस्था को पहुंचाई गई क्षति की पूर्ति की स्थिति भिन्न है । ऐसी क्षति के लिए अंग्रेजी में टॉर्ट (Tort) शब्द का प्रयोग किया जाता है । इसका अभिप्राय किसी गलत कार्य या हानि से है जिसके लिए मुकदमा चलाया जा सकता है ,संप्रभु कार्यो के लिए नहीं । देश में कानून और व्यवस्था को बनाए रखने में , देश की रक्षा , युद्व आदि अनेक दायित्वों के निर्वाह के समय भी नागरिकों को हानि पहुंच सकती है , परन्तु राज्य अपने ऐसे सम्प्रभु संबंधी दायित्वों के निर्वाह के मामलो में क्षतिपूर्ति के दायित्व पर प्रतिबन्ध लगा देता है। 4) सरकारी अधिकारियों के विरूद्व दावे – लोक सेवकों पर अपने निजि या व्यक्तिगत तौर पर सम्पन्न समस्त कार्यो का ठीक उसी प्रकार से दायित्व होता है , जिस प्रकार एक सामान्य नागरिक का होता है , लेकिन पद पर कार्य करते हुए लोक सेवकों के रूप में कार्य करते हुए भिन्न– भिन्न देशो में भिन्न– भिन्न श्रेणी के कार्मिकों के लिए अलग अलग स्थिति है । इस दायित्व से कानूनी मुक्ति के लिए राज्याध्यक्षों , न्यायिक अधिकारियों और अन्य लोक सेवकों में भेद किया जाता है जो न्यायिक नियंत्रण के अधिकार को सीमित करती है ।

भारत में संविधान द्वारा राष्ट्रपति तथा राज्यपालों को अपने पद पर कार्य करते हुए और शक्तियों का प्रयोग करते हुए किसी भी दायित्व से मुक्त माना गया है। राष्ट्रपति के विरूद्व विधान मंडल में महाभियोग का प्रस्ताव पारित करके उसे पदच्युत किया जा सकता है । राष्ट्रपति और राज्यपाल को अपने निजी कार्यो के लिए पदों पर बने रहते हुए फौजदारी कार्यवाही, नजरबंदी तथा जेल दण्ड से पूर्णतया मुक्त रखा गया है। निजी कार्यो के लिए पद पर कार्य करते हुए उन पर दीवानी मुकदमा चलाया जा सकता है , लेकिन इसके लिए उन्हें 2 माह का नोटिस देना होगा जिसमें नोटिस का कारण, नोटिस देने वाले का नाम पता आदि विवरण देना होगा। फौजदारी दायित्व के संबंध में भारतीय दण्ड संहिता के आधीन किसी भी ऐसे कार्य को अपराध नहीं समझा जाएगा, जो किसी व्यक्ति के द्वारा तथ्य की आवश्यकता के कारण सच्चे विश्वास से यह मानते हुए किया हो कि वह उस कार्य को करने के लिए कानून द्वारा बाध्य है । इसके अन्तर्गत लोक सेवकों को अनेक प्रकार के कार्य आ जाते हैं । उच्च अधिकारी के ही आदेश पर उग्र भीड़ पर गोली चलाना इसी के अन्तर्गत आएगा । सरकारी कर्मचारी के द्वारा सरकारी हैसियत से किये गये कार्य के लिए फौजदारी मुकदमा चलाने के लिए राष्ट्रपति या राज्यपाल से अनुमति लेना अनिवार्य होता है । कुछविधिवेता इस प्रावधान को असंवैधानिक मानते हैं क्योंकि ये धारा कानून के समस्त मौलिक अधिकारों से मेंल नहीं खाती है । 13

।।) असाधारण उपचार – भारतीय संविधान के अनुच्छेद 32(2) के अनुसार उच्चतम न्यायालय को ये अधिकार दिया गया है कि वह नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए आवश्यक आदेश , निर्देश तथा लेख निकाल सके अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालयों को यह सभी शक्तियां सौंपता है । इस संबंध में उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार सर्वोच्च न्यायालय से भी व्यापक है तथा उच्च न्यायालय को मौलिक अधिकारों सहित अन्य संवैधानिक समीक्षाओं के संबंध में भी रिट निकालने का अधिकार है । इन असाधारण उपचारों का इतिहास काफी लम्बा है, तथा ब्रिटिश संवैधानिक इतिहास से देखा जा सकता है , वहां इनको न्याय के मूल स्त्रोत राजा के नाम पर प्रसारित विशेषाधिकार लेख कहा जाता है । इन उपचारों को असाधारण इसलिए कहा जाता है क्योंकि बंदी प्रत्यक्षीकरण को छोड़कर अन्य सभी लेख न्यायालय द्वारा किसी के अधिकार के रूप में नहीं वरन् उसकी स्वेच्छा से प्रसारित किये जाते हैं जहां अन्य साधन अपर्याप्त हों । 14 प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण के ये विभिन्न लेख इस प्रकार हैं – 1) बन्दी प्रत्यक्षीकरण (The Writ of Habeas Corpus) प्रशासन के सामने किसी समस्या पर काबू पाने के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि किसी नागरिक या नागरिकों को बन्दी बनाले या नजरबंद कर ले, बन्दी बनाये गए व्यक्ति या व्यक्तियों द्वारा अपनी नजर–बंदी का मामला न्यायालय के सामने ले जाया जा सकता है । न्यायालय प्रशासनिक अध् िाकारियों को , जिन्होने उस व्यक्ति या व्यक्तियों को नजरबंद कर रखा है आदेश देता है कि बंदी बनाये गए व्यक्ति को सशरीर न्यायालय में उपस्थित करे ताकि उसे (या उन्हे)बंदी बनाए जाने के औचित्य पर विचार किया जा सके । हेबियस कोरपस ' एक लैटिन शब्द है , जिसका शाब्दिक अर्थ है ' शरीर को प्राप्त करना ' । इससे लोक सेवकों द्वारा किसी को मनमाने ढंग से बंदी बनाने पर प्रतिबन्ध लगता है और वैयक्तिक स्वतंत्रता की रक्षा सुनिश्चित हो जाती है ।

अधिकांश देशो में विघटनकारी ताकतों एवं आतंककारी गतिविध् ियों पर काबू पाने के उद्देश्य से कुछ कानून पारित कर रखे हैं , जिनके आधीन नजरबंद किये गये व्यक्ति को इस लेख के तहत कोई लाभ नहीं मिल सकता भारत में पारित " राष्ट्रीय सुरक्षा कानून ' आदि के कारण इस लेख की उपयोगिता सीमित हो जाती है।

2) परमादेश (Mandamus) कभी कभी यह अनुभव किया जाता है कि कोई अधिकारी या निगम या निम्न न्यायालय

परिभाषित कर्तव्यो का पालन नहीं करता है । ऐसी स्थिति में परमादेश का सहारा लिया जा सकता है। परमादेश एक लैटिन शब्द मेंनडेमस ' का हिन्दी रूपान्तर है , जिसका अर्थ है ' अधिादेश ' या समादेश । यह एक ऐसा अधिदेश या समादेश है , जिसे राज्य या सार्वभौम सत्ता के नाम से सक्षम न्यायालय किसी अधिकारी , निगम या निम्न या अधीन न्यायालय के नाम से किसी कर्तव्य विशेष के पालन के लिए ,जो उस लेख में उल्लेखित हो ,जारी कर सकता है । सामान्यतः न्यायालय इस लेख को तब तक जारी नहीं करते जब तक कि कोई अन्य उपचार उपलब्ध नहीं हो ।

3) अधिकार पृच्छा (Quo WaŸkanto) अधिकार पृच्छा ' लैटिन शब्द ' क्वो वारण्टो ' का हिन्दी अनुवाद है जिसका शाब्दिक अर्थ है ' किस अधिपत्र या प्राधिकार द्वारा'। इस लेख का उद्देश्य किसी सार्वजनकि पद संबंधी किसी दावे की जांच करना है । यह एक ऐसी कार्यवाही या उपचार है , जिसके द्वारा राज्य द्वारा ऐसे दावों की वैधता की जांच की जाती है ,जिसके कारण किसी पक्ष द्वारा किसी पद पर या विशेषाधिकार का दावा किया गया है । पद के दावे की वैधता सिद्व नहीं होने पर राज्य उस व्यक्ति को पद से वंचित कर सकता है ।

4) प्रतिषेध आदेश – (Prohibition) .. कोई न्यायालय या न्यायिक अधिकारी या लोक सेवक जो अर्ध न्यायिक कार्य करता है , अपने क्षेत्राधिकार का अतिक्रमण करता है ,तो उसके उपचार के लिए यह काम में लिया जाता है । इस लेख को केवल न्यायिक या अर्द्व न्यायिक प्रकृति का कार्य करने वाले अधिकारियों के विरूद्व ही जारी किया जाता है । यह किसी उच्च श्रेणी के न्यायालय द्वारा निम्न न्यायालय या अर्ध न्यायिक कृत्य करने वाले अधिकारी के द्वारा किसी अधिकार क्षेत्र पर अनाधिकृत रूप से अधिकार करने पर रोक है । यह रिट कार्यवाही लम्बित रहने के निमित्त जारी की जाती है ।

5) उत्प्रेषण – (Certiorari) इसके तहत उच्च श्रेणी का न्यायालय निचले श्रेणी के न्यायालय या अभिकरण या अधिाकारी को यह आदेश देता है कि वह किसी मुकदमें विशेष से संबंधित समस्त कागजात उच्च न्यायालय को भेज दे स्मरणीय रहे कि यह लेख केवल किसी न्यायिक कृत्य के विरूद्व ही प्रसारित किया जाता है और इसका उद्देश्य क्षेत्राधिाकारहीन कार्यो को रोकना या उन्हें समाप्त करना है। उत्प्रेषण लेख और निषेधाज्ञा एक से जान पड़ते हैं और वास्तविकता यह है कि – दोनों में अन्तर है । उत्प्रेषण लेख निषेधात्मक तथा सकारात्मक दोनों ही हैं , जबकि निषेधाज्ञा केवल रक्षात्मक ही होती है ।15

6) निषेधाज्ञा (Injunction) – यह न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति से कोई काम करने या करने से दूर रहने के लिए कहने को जारी की जाती है । ये दो प्रकार की होती है– आदेशात्मक और निरोधक । आदेशात्मक निषेधाज्ञा परमादेश की रिट सी लगती है पर यह भिन्न होती है । एम0पी0 शर्मा के अनुसार '' परमादेश को किसी गैर सरकारी व्यक्ति के विरूद्व जारी नहीं किया जा सकता है , जबकि निषेधाज्ञा मुख्यतया गैर सरकारी कानून की ही प्रक्रिया है और प्रशासनिक कानून में यदा–कदा ही प्रयुक्त होतीहै । परमादेश आम कानून का उपचार है , जबकि निषेधाज्ञा समदृष्टि की प्रभावशाली भुजा है । 16

न्यायालय उपरोक्त तमाम समादेश जारी कर सकते हैं परन्तु संविधान में केवल पहले पांच का उल्लेख है । न्यायिक सकियतावाद – प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण का एक नया रूप न्यायिक सकियता–वाद के रूप में देखने को मिलता है , तकनीकी तौर पर न्यायिक सकियतावाद से तात्पर्य उस वैधाानिक नियम में ढील देना है जिसके अन्तर्गत केवल पीडित व्यक्ति ही न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता है इस प्रकार न्यायिक सकियतावाद वह प्रवृति है जिसमें न्याय –पालिका सामाजिक व प्रशासनिक गतिविधियों को नियमित करने में शासन के अन्य अंगों की तुलना में बढ चढकर भूमिका निभाने लगती है तथा कार्य–पालिका व विधायिका के सकमण काल में न्यायपालिका मूक दर्शक नहीं बनी रहती है बल्कि संविधान तथा नागरिक अधिकारों के रक्षक के रूप में एक सजग प्रहरी की भूमिका निभाती है । इस प्रकार न्यायिक सकियतावाद ने लोकतंत्र की जड़ों को मजबूत किया है तथा जनता की समस्याओं के प्रति प्रशासन को सचेत किया है । भारत में सन 1985 में न्यायमूर्ति पी0एन भगवती ने इस प्रकिया को प्रारंम्भ किया तथा न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर , न्यायमूर्ति चिनप्पा रेड्डी न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह इत्यादि ने इसे आगे बढ़ाया । न्यायिक सकियतावाद के अन्तर्गत अनेक ऐसे निर्णय दिये गये जो भारतीय इतिहास में पहली बार दिखाई पड़ रहे थे। इन निर्णयों के कई कतिपय चर्चित प्रकरण निम्नलिखित हैं 17– इन निर्णयो में पूर्व पैट्रोलियम मंत्री कैप्टन सतीश श्शर्मा पर अनियमितापूर्वक पैट्रोल पम्प आवंटन के कारण

50 लाख रूपये का जुर्माना तथा पूर्व श्शहरी आवास मंत्री श्रीमती शीला कौल पर दुकान आवंटन मामले में 60 लाख रूपये का जुर्माना न्यायालय के द्वारा किया जाना प्रमुख है।

– झूठा मुकदमा बनाकर व्यापारी को तंग करने के आरोप में हरियाणा के आई पी .एस अधिकारी को जेल – मार्च 1997 में गुजरात के पुलिस हिरासत में हुई मौत के लिए पुलिस अधीक्षक को उत्तरदायी मानते हुए जेल भेजा ।– दिल्ली की सफाई व्यवस्था में सुधार न होने पर अधिकारियों को फटकार इत्यादि । समस्त प्रजातांत्रिक देशो में न्यायपालिका को प्रशासन पर नियंत्रण रखने के अनेक अवसर ओर तरीके उपलब्ध करा रखे हैं । यद्यपि इन तरीकों की अपनी सीमाएं भी हैं । इन सबके अतिरिक्त कुछ अन्य कारक भी हैं ,जो न्यायिक नियंत्रण को सीमित करते हैं , निम्न प्रकार हैं –

1– न्यायालय द्वारा स्वयं हस्तक्षेप नहीं – इस क्षेत्र में न्यायालय हस्तक्षेप तभी करते हैं , जबकि कोई व्यक्ति या व्यक्ति समूह न्यायालय के समक्ष यह प्रार्थना या आवेदन करे कि सरकारी कर्मचारी के किसी कार्य के परिणामस्वरूप उसके अधिकारों का अतिकमण हुआ है या उससे अमुक हानि होने का भय है । 2– घटना घटने के पश्चात नियंत्रण – न्यायालय सामान्यतया घटना घटने के पश्चात ही कुछ कार्य कर पाता है अर्थात इसकी उपयोगिता शव–परीक्षण (पोस्ट मार्टम) जितनी ही रह जाती है । ऐसी स्थिति में प्रशासन पर नियंत्रण' चेतावनी ' मात्र ही रह जाता है ,इससे अधिक कुछ भी नहीं । 3– कुछ मामले न्यायालय के क्षेत्राधिकार के बाहर – सरकार कुछ अधिनियम ,नियम और विनियमों को न्यायालय के ही क्षेत्राधिकार से बाहर रख देती है उन विषयों पर न्यायालय में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता । 4– स्वतः न्यायालय द्वारा प्रतिबन्ध – अनेक देशों में न्यायालय स्वतः प्रतिबन्ध लगाकर प्रशासन में अनेक मामलों को अपने क्षेत्राधिकार से बाहर कर देते हैं अमेंरिका में न्यायालय ने अपने आप सर्वाधिक प्रतिबंध लगाकर अनेक प्रशास–निक मामलो में दखल देने से इन्कार कर रखा है। 5– न्यायिक प्रकिया जटिल खर्चीली और मंद है – न्यायिक प्रकिया अत्यन्त ही जटिल, खर्चीली और बहुत मंद गति से आगे बढ़ती है। न्यायिक कार्य वास्तव में इतना जटिल है कि बिना वकील करे कुछ किया ही नहीं जा सकता । वकीलों की फीस, कोर्ट फीस, आए दिन न्यायालय आने–जाने का खर्चा आदि इतना पडता है कि अनेक लोग प्रशासनिक अन्याय सहन कर लेते हैं , न्यायालय जाने की हिम्मत और पैसा नहीं जुटा पाते । यदि पैसा और हिम्मत जुटा भी ले तो और न्यायालय में मुकदमा दायर भी करदें तो प्रकिया इतनी विलम्बकारी है कि अनेक मामलों में उसकी उपयोगिता ही नहीं रह जाती है। निम्न न्यायालय में फैसला हो जाता है तो उसके उच्च

और उच्चतर न्यायालय में अपील होने पर उसका उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है । कहा जाता है '' न्याय में विलम्ब न्याय से इन्कार करना है ।18 6– न्यायाधीश केवल विधि के विशेषज्ञ होते हैं ,इनमें विशेष तकनीकी योग्यता का अभाव होता है । अतः प्रशासनिक खर्चे की अत्यन्त तकनीकी प्रकृति को पूरे एवं समुचित तौर पर नहीं समझने के कारण भी प्रशासनिक

न्यायाधिकरण को भेज दिये जाते हैं । इनमें वे लोग होते हैं जो तकनीकी विशेषज्ञ होते हैं । 19

7— राज्य के कल्याणकारी रूझान के चलते प्रशासन का आकार , उसकी विविधता और जटिलता बढ़ गई है । अतः न्यायालय प्रशासन के उस प्रत्येक कार्य की समीक्षा नहीं कर सकते जो नागरिक को प्रभावित करता है । 20

8— न्यायिक सक्रियतावाद से शक्ति विभाजन असंतुलित हो रहा है ,शासन के अन्य अंगो की तुलना में न्यायालय अधि ाक शक्तियां ग्रहण कर रहा है तथा कार्यपालिका के कार्यो में हस्तक्षेप कर रहे हैं , यह प्रवृति लोकतंत्र के लिये धातक सिद्व हो सकती है ।

9— कुछ व्यक्तियों तथा संगठनो द्वारा न्यायपालिका के नियंत्रण साधनों का स्वयं के हित में प्रयोग किया जा रहा है तथा PIL(Public Interesaat Litigation) अब Private Interesaat Litigation , Paisa Income Litigation , Political Interesaat litigation बन चुका है । कई राजनैतिक दलों ने तो अपने भीतर PIL Cell भी स्थापित कर रखे हैं । 10— यह कि कई बार आरोप लगता है कि न्यायपालिका नियंत्रण के नाम पर अति उत्साहित निर्णय दे देती है तथा व्यावहारिक समस्याओं को ध्यान में नहीं रखती है , जैसे दिल्ली में केवल C.N.G से आटो के रिक्शा चलाने का आदेश दिया । यदि एक नागरिक को स्वच्छ पर्यावरण में जीने का अधिकार है तो दूसरे नागरिक को भी अपने परिवार के भरण पोषण का अधिकार है । यदि उससे उसका रिक्शा छीन लिया जायेगा तो वह अपने परिवार का पेट कैसे भरेगा। यदि वर्तमान समय में प्रशासन के बढते हुए कार्य ने उसकी शक्तियों में भी वृद्धि की है । प्रशासन द्वारा अपनी शक्तियों के दुरूपयोग को रोकने के लिए उस पर नियंत्रण आवश्यक है । न्यायिक नियंत्रण प्रशासन को अपनी शक्तियों के दुरूपयोग से रोकने का एक प्रभावी तरीका है । न्यायिक नियंत्रण के अनेक साधन विद्यमान हैं , जिनके

द्वारा प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित किया जाता है । यद्यपि ये सभी साधन महत्वपूर्ण एवं प्रभावी हैं किन्तु इन साधनों की अपनी सीमाएं हैं तथा कुछ ऐसे कारक भी हैं , जो प्रशासन पर न्यायिक नियंत्रण को सीमित करते हैं ।

परिणामस्वरूप प्रशासन पर उतना प्रभावी नियंत्रण स्थापित नहीं हो पाता । न्यायिक नियंत्रण को प्रभावी बनाने के संदर्भ में कुछ सुधार किए जा सकते हैं जो निम्न प्रकार हैं —

1—कानूनी प्रकिया को पर्याप्त सरल बनाया जाना चाहिए
2—लोक सेवकों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाया जाना चाहिए
3— आम जनता को शिक्षित व प्रशिक्षित करने के साथ—साथ लोक सेवकों को प्रशिक्षित किया जाए 4—न्यायिक पुनर्रीक्षण के अधिकार को व्यापक बनाया जाए। 5—न्यायिक नियंत्रण को सीमित करने वाले कारकों का निराकरण किया जाए। 6—कार्यपालिका के साथ—साथ न्यायपालिका की भी जवाबदेही तय की जानी चाहिए तथा एक न्यायिक परिषद का गठन किया जाना चाहिए जिससे पर्याप्त संख्या में सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय में वरिष्ठ न्यायाधीश सम्मिलित हो तथा यह परिषद भारत के मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त किसी भी न्यायाधीश के विरूद्व शिकायतों की जांच करे तथा साथ ही सरकार को उचित कार्यवाही हेतु सुझाव दे । 7—9 जुलाई 2007 को अदालतों के कम्प्यूटरीकरण की अदालत परियोजना प्रारम्भ की गई है जिसके अन्तर्गत अगले 5 वर्षो में तीन चरणो के अन्तर्गत तहसील स्तर से लेकर उच्चतम न्यायालय तक अदालतों की डिजिटल इंटरकनैक्टिविटी द्वारा आपस में जोड़ा जाएगा तथा अदालतों का पूर्ण कम्प्यूटरीकरण किया जाएगा । अतः इस योजना का गंभीरतापूर्वक प्रभावी कियान्वयन किया जाना चाहिए । 21 जोधपुर जिला व सत्र न्यायालय देश का प्रथम ऑन लाइन जिला न्यायालय हो गया है , इस न्यायालय के फैसले व संबंधित जानकारी अब इंटरनैट पर प्राप्त की जा सकेगी। 22 अतः इस प्रकार देश के उच्च न्यायालयों को भी तेजी से ऑन लाइन करना होगा । 8—हरियाणा के मेवात जिले के पुन्हाना कस्बे में 4 अगस्त 2007 को देश के पहले मोबाइल कोर्ट का उदघाटन मुख्य न्यायाधीश के . जी . बालाकृष्णन ने किया है ,यह कोर्ट प्रतिदिन अलग—अलग पूर्व निर्धारित क्षेत्रो में जाकर विभिन्न मामलो की सुनवाई करेगा तथा दूर—दराज के क्षेत्रों के वंचित वर्गो को शीघ्र तथा सस्ता न्याय प्राप्त होगा। 23 इसी प्रकार के प्रयास देश के अन्य भागों में भी करने की जरूरत है । 9—बड़ी संख्या में लम्बित वादों के त्वरित निपटारे के लिए रात्रिकालीन न्याया— लयों की स्थापना गुजरात में की गई है । सफल रहने पर यह प्रयोग सम्पूर्ण देश में लागू करना चाहिए । 24 10— ग्रामीण क्षेत्रों में सस्ता सुलभ व त्वरित न्याय उपलब्ध कराने के लिए भी पंचायत स्तर पर ग्राम न्यायालयों की स्थापना भी सरकार की योजना है इसके लिए ग्राम न्यायालय विधेयक , 2007 संसद में लाया जायेगा) विधेयक के मसौदे को केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने 13 दिसम्बर 2007 को मंजूरी दे दी है । ये न्यायालय सिविल तथा किमिनल दोनों प्रकार के वाद सुनेगे तथा अधिकतम 6 माह में निर्णय दे देंगे । 25 अतः इस बिल को अति शीघ्र संसद से पारित करवाना चाहिए ताकि ग्राम स्तर पर भी सशक्त न्यायपालिका स्थापित हो सके। 11—

महत्वपूर्ण क्षेत्रो हेतु Fast track Courts का गठन होना चाहिए 12—सुप्रीम कोर्ट के 27 नवम्बर 2006 के उस आदेश की पालना की जानी चाहिए जिसमें उसने कहा है कि राज्यों के अन्य न्यायालयो के पीठासीन न्यायाधीश जांच आयोगों के अध यक्ष न नियुक्त किये जाएं ताकि न्यायालय के सामान्य प्रकिया नियमित रूप से चलती रहे 26 तथा पीठासीन न्याया—धीश अतिरिक्त कार्यभार से बच सकें।

13— बहुत से पुराने कानूनो जैसे 27 पुलिस एक्ट 1861, शासकीय गोपनीयता अधिनियम 1923 , भारतीय साक्ष्य अधि ानियम 1872 इत्यादि को वर्तमान जरूरतों के अनुरूप संशोधि ात करना चाहिए या आवश्यकता होने पर नए कानूनो द्वारा प्रतिस्थापित करना चाहिए ।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1— बी0एल0 फाडिया , '' लोक प्रशासन '' , साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, 2006 , पृ0 875 2— रविन्द्र शर्मा , '' भारत में लोक प्रशासन '' , कॉलेज बुक हाउस , जयपुर, 1996 , पृ0 121 3—बी0एल0 फाडिया , पूर्वोक्त , पृ0 875 4— एम0 लक्ष्मीकांत '' लोक प्रशासन '' टाटा मेंग्राहिल पब्लिशिंग कम्पनी लिमिटेड '' , नई दिल्ली, 2006, पृ0 5 .1 5— एल0डी0 व्हाइट , '' इण्ट्रोडक्शन टू दी स्टडी ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन '' , चतुर्थ संस्करण , पृ0 510 6— एम0 लक्ष्मीकांत , पूर्वोक्त पृ0 5 .2 7—बी0एल0 फाडिया , पूर्वोक्त , पृ0 881 8—एम0 लक्ष्मीकांत , पूर्वोक्त , पृ0 5 .11 9—रविन्द्र शर्मा , पूर्वोक्त , पृ0 12 .8 10— अवस्थी एवं अवस्थी , '' भारतीय प्रशासन '' , लक्ष्मी नारायण अग्रवाल आगरा, 2005 , पृ0 434 11— रविन्द्र श्शर्मा ,पूर्वोक्त पृ0 12 .9 12 .10 12—लक्ष्मीकांत , पूर्वोक्त , पृ0 5 .12 13— रविन्द्र श्शर्मा , पूर्वोक्त , पृ0 12 .10 , 12 .12 14— बी0एल0 फडिया , पूर्वोक्त , पृ0 883 15— रविन्द्र श्शर्मा , पूर्वोक्त , पृ0 12 .12 एवं 12 .14 16— एम0 लक्ष्मीकांत , पूर्वोक्त , पृ0 5 .14 17— सुरेन्द्र कटारिया , कार्मिक प्रशासन , उत्तर आर . बी. एस .ए पब्लिकेशन्स, जयपुर 17 18—रविन्द्र शर्मा , पूर्वोक्त , पृ0 12 .14 एवं 12 .15 19— होशियार सिंह , प्रदीप सचदेवा '' लोक प्रशासन के सिद्वान्त '' , किताब महल ,नई दिल्ली 2005 20) एम0 लक्ष्मीकांत , पूर्वोक्त , पृ0 5 .14 21) सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल, अक्टूबर 2007 22) प्रतियोगिता दर्पण , समसामयिकी वार्षिकी 2007 23) प्रतियोगिता दर्पण , समसामयिकी वार्षिकी , 2008 24) प्रतियोगिता दर्पण , समसामयिकी वार्षिकी 2007 25) प्रतियोगिता दर्पण , हिन्दी मासिक फरवरी 2008 26) प्रतियोगिता दर्पण , समसामयिकी वार्षिकी 2007 27) प्रतियोगिता दर्पण , समसामयिकी वार्षिकी , 2007